Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

भामह से मम्मट तक अलंकारशास्त्र का विकास: एक ऐतिहासिक विश्लेषण

डा. राज पाल प्राचार्य
गांधी आदर्श कालेज, समालखा (पानीपत)

सारांश

"भामह से मम्मट तक अलंकारशास्त्र का विकास" विषय संस्कृत काव्यशास्त्र की ऐतिहासिक यात्रा को उद्घाटित करता है, जिसमें काव्य की परिभाषा, सौंदर्यबोध, रस-अलंकार की भूमिका तथा काव्य के तत्वों की अवधारणा समय के साथ कैसे परिवर्तित हुई, इसका विश्लेषण किया जाता है। यह शोध भामह (7वीं शताब्दी) से प्रारंभ होकर मम्मट (11वीं शताब्दी) तक की उस बौद्धिक परंपरा को समझने का प्रयास है, जिसने संस्कृत साहित्य के सौंदर्यशास्त्र को गहराई प्रदान की। भामह का *काव्यालंकार* ग्रंथ अलंकारों को काव्य का प्राण मानता है। उनके अनुसार अलंकार ही वह तत्व है जो काव्य को काव्यत्व प्रदान करता है। उन्होंने काव्य की परिभाषा को "शब्दार्थौ सगुणौ काव्यम्" के रूप में प्रस्तुत किया, जिसमें गुणयुक्त शब्द और अर्थ की संगति को काव्य का मूल माना गया। भामह की दृष्टि में रस की भूमिका गौण है, और वे अलंकारों की संख्या, प्रकार और प्रभाव पर विशेष बल देते हैं।

दूसरी ओर, मम्मट का *काव्यप्रकाश* ग्रंथ एक समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। मम्मट ने रस को काव्य की आत्मा माना – "रसात्मकं काव्यम्" – और अलंकार, गुण, रीति, वक्रोक्ति, दोष आदि को सहायक तत्वों के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने काव्य की परिभाषा को व्यापक बनाया और काव्य के विभिन्न पक्षों को समन्वित रूप में प्रस्तुत किया। मम्मट की दृष्टि में काव्य केवल अलंकारों का समुच्चय नहीं, बल्कि भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है। इस शोध में भामह और मम्मट के बीच के अन्य आचार्यों – जैसे दण्डी, वामन, उद्भट, रुद्रट आदि – की विचारधारा का भी संक्षिप्त विश्लेषण किया जाएगा, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि काव्यशास्त्र की धारा किस प्रकार क्रमिक रूप से विकसित हुई। शोध का उद्देश्य केवल तुलनात्मक विश्लेषण करना नहीं है, बल्कि यह भी समझना है कि सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक परिवेश ने इन आचार्यों की दृष्टियों को कैसे प्रभावित किया। यह अध्ययन संस्कृत साहित्य के विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं और अध्यापकों के लिए एक मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

है, जो काव्यशास्त्र की गूढ़ता को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझना चाहते हैं। साथ ही, यह आधुनिक साहित्यिक सिद्धांतों के साथ संवाद स्थापित करने की दिशा में भी एक प्रयास होगा।

Keywords: - मम्मट, अलंकारशास्त्र, काव्यालंकार, काव्यप्रकाश, रससिद्धांत, अलंकारसिद्धांत, काव्यपरिभाषा, गुण-दोष, रीति, वक्रोक्ति, संस्कृत काव्यशास्त्र, ऐतिहासिक विश्लेषण

प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य की समृद्ध परंपरा में काव्यशास्त्र एक अत्यंत महत्वपूर्ण शाखा रही है, जिसने न केवल साहित्यिक सौंदर्यबोध को परिभाषित किया, अपितु भारतीय चिंतन की सूक्ष्मता और गहराई को भी उजागर किया। काव्यशास्त्र का विकास एक निरंतर प्रवाह है, जिसमें विभिन्न आचार्यों ने अपने-अपने युग की साहित्यिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुरूप काव्य के स्वरूप, तत्वों और प्रयोजन की व्याख्या की। इस प्रवाह में भामह और मम्मट दो ऐसे स्तंभ हैं, जिन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र को दिशा और गहराई प्रदान की। भामह, जो संभवतः 7वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में सक्रिय थे, अपने ग्रंथ *काव्यालंकार* में अलंकार को काव्य का प्राण मानते हैं। उनके अनुसार अलंकारों की उपस्थिति ही काव्य को काव्यत्व प्रदान करती है। उन्होंने काव्य की परिभाषा को "शब्दार्थौ सगुणौ काव्यम्" के रूप में प्रस्तुत किया, जिसमें गुणयुक्त शब्द और अर्थ की संगति को काव्य का मूल माना गया। भामह की दृष्टि में रस की भूमिका गौण है, और वे अलंकारों की संख्या, प्रकार और प्रभाव पर विशेष बल देते हैं।

वहीं दूसरी ओर, मम्मट, जो 11वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सक्रिय रहे, अपने ग्रंथ *काव्यप्रकाश* में एक समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। मम्मट ने रस को काव्य की आत्मा माना – "रसात्मकं काव्यम्" – और अलंकार, गुण, दोष, रीति, वक्रोक्ति आदि को सहायक तत्वों के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने काव्य की परिभाषा को व्यापक बनाया और काव्य के विभिन्न पक्षों को समन्वित रूप में प्रस्तुत किया। मम्मट की दृष्टि में काव्य केवल अलंकारों का समुच्चय नहीं, बल्कि भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, जो पाठक के हृदय में रस का संचार करता है। इस प्रकार भामह से मम्मट तक की यात्रा केवल दो आचार्यों की विचारधारा का अंतर नहीं दर्शाती, बल्कि यह उस गहन बौद्धिक विमर्श को उद्घाटित करती है, जिसमें काव्य के स्वरूप, प्रयोजन और सौंदर्य की अवधारणा निरंतर विकसित होती रही।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

इस शोध का उद्देश्य भामह और मम्मट के काव्यदर्शन का तुलनात्मक और ऐतिहासिक विश्लेषण करना है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि संस्कृत काव्यशास्त्र में अलंकार, रस, गुण, दोष आदि तत्वों की अवधारणा किस प्रकार क्रमिक रूप से परिपक्व हुई। साथ ही, यह भी देखा जाएगा कि इन आचार्यों की दृष्टियों को उनके युगीन सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक परिवेश ने किस प्रकार प्रभावित किया। इस अध्ययन में दण्डी, वामन, उद्भट, रुद्रट आदि मध्यवर्ती आचार्यों की विचारधारा का भी संक्षिप्त उल्लेख किया जाएगा, जिससे काव्यशास्त्र की विकास-धारा को समग्रता में समझा जा सके। यह शोध न केवल संस्कृत साहित्य के विद्यार्थियों और अध्यापकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, अपितु आधुनिक साहित्यिक सिद्धांतों के साथ संवाद स्थापित करने की दिशा में भी एक सार्थक प्रयास होगा।

भामह का काव्यदर्शन: काव्य की परिभाषा, अलंकारों की भूमिका

संस्कृत काव्यशास्त्र के इतिहास में भामह का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे प्रथम ऐसे आचार्य माने जाते हैं जिन्होंने काव्यशास्त्र को एक स्वतंत्र विषय के रूप में प्रतिष्ठित किया और उसके मूलभूत तत्त्वों की व्याख्या की। भामह का ग्रंथ *काव्यालंकार* संस्कृत साहित्य में अलंकारशास्त्र की प्रारंभिक और प्रभावशाली रचना है, जिसमें उन्होंने काव्य की परिभाषा, अलंकारों की प्रकृति, उनकी संख्या, वर्गीकरण तथा काव्य की उत्कृष्टता के मानदंडों पर विस्तार से विचार किया है। भामह के अनुसार काव्य वह है जिसमें शब्द और अर्थ दोनों गुणयुक्त हों – "शब्दार्थौ सगुणौ काव्यम्"। इस परिभाषा में उन्होंने काव्य के दो मूल तत्त्वों – शब्द और अर्थ – को केंद्र में रखा है, और यह माना है कि जब ये दोनों गुणों से युक्त होते हैं, तब ही काव्य की रचना होती है। भामह ने अलंकार को काव्य का प्राण माना है। उनके अनुसार अलंकार ही वह तत्त्व है जो काव्य को सौंदर्य प्रदान करता है और उसे सामान्य वाक्य से भिन्न बनाता है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा – "अलंकारः काव्यस्य जीवितम्" – अर्थात् अलंकार काव्य का जीवन है। इस दृष्टिकोण में भामह ने रस को गौण स्थान दिया है और काव्य की उत्कृष्टता को अलंकारों की उपस्थिति और प्रभाव से जोड़ा है। उन्होंने अलंकारों की संख्या, उनके प्रकार, उनके प्रयोग की विधियाँ और उनके प्रभावों पर विस्तार से चर्चा की है। भामह के अनुसार अलंकारों के बिना काव्य निष्प्रभ होता है, और उनकी उपस्थिति ही काव्य को आकर्षक, प्रभावशाली और हृदयग्राही बनाती है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

भामह का दृष्टिकोण अत्यंत वस्तुनिष्ठ और सौंदर्यपरक है। उन्होंने काव्य को एक कलात्मक अभिव्यक्ति माना है, जिसमें अलंकारों के माध्यम से सौंदर्य की सृष्टि होती है। उनके ग्रंथ में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक, अनुप्रास आदि अलंकारों की विस्तृत चर्चा मिलती है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वे अलंकारों को केवल सजावट नहीं, बल्कि काव्य की आत्मा मानते थे। भामह की दृष्टि में काव्य का उद्देश्य पाठक को सौंदर्य का अनुभव कराना है, और यह अनुभव अलंकारों के माध्यम से ही संभव होता है। भामह का काव्यदर्शन उस युग की साहित्यिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें काव्य को एक कलात्मक साधना माना गया था। उन्होंने काव्य की परिभाषा को स्पष्ट, संक्षिप्त और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया, और अलंकारों की भूमिका को केंद्रीय स्थान दिया। उनका दृष्टिकोण बाद के आचार्यों के लिए एक आधार बना, जिससे काव्यशास्त्र की परंपरा आगे बढ़ी। यद्यपि बाद में रस को अधिक महत्व दिया गया, परंतु भामह की अलंकारप्रधान दृष्टि ने संस्कृत काव्यशास्त्र को एक ठोस प्रारंभिक आधार प्रदान किया, जिसे नकारा नहीं जा सकता। उनके विचार आज भी काव्य की सौंदर्यात्मक समीक्षा में प्रासंगिक हैं और साहित्यिक विमर्श में उनका स्थान स्थायी है।

मम्मट का दृष्टिकोण: रस, गुण, दोष, रीति आदि का समन्वय

संस्कृत काव्यशास्त्र के इतिहास में मम्मट का योगदान अत्यंत विशिष्ट और समन्वयकारी रहा है। उनका ग्रंथ *काव्यप्रकाश* काव्यशास्त्र की परंपरा में एक ऐसा ग्रंथ है जिसमें पूर्ववर्ती आचार्यों के विचारों का समन्वय करते हुए एक व्यापक और संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। मम्मट ने काव्य की परिभाषा को केवल अलंकारों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्होंने रस को काव्य की आत्मा स्वीकार करते हुए कहा – "रसात्मकं काव्यम्"। इस परिभाषा में उन्होंने स्पष्ट रूप से यह संकेत दिया कि काव्य का मूल उद्देश्य रस की सृष्टि है, और अन्य तत्त्व – जैसे अलंकार, गुण, दोष, रीति, वक्रोक्ति आदि – इस रस की अभिव्यक्ति में सहायक भूमिका निभाते हैं। मम्मट का दृष्टिकोण विश्लेषणात्मक और समन्वयवादी है। उन्होंने काव्य के विभिन्न पक्षों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास किया है। उनके अनुसार काव्य में रस की उत्पत्ति तभी संभव है जब शब्द और अर्थ में सामंजस्य हो, गुणों की उपस्थिति हो, दोषों की अनुपस्थिति हो, और रीति उपयुक्त हो। उन्होंने काव्य के दोषों की भी विस्तृत चर्चा की है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वे केवल सौंदर्य की सृष्टि पर ही नहीं, बल्कि उसकी शुद्धता और प्रभावशीलता

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

पर भी ध्यान देते हैं। मम्मट ने गुणों को भी काव्य की उत्कृष्टता का आधार माना है, और उन्हें रस की अभिव्यक्ति में सहायक बताया है।

रीति के संदर्भ में मम्मट ने वामन की परंपरा को आगे बढ़ाया है, परंतु उन्होंने रीति को काव्य की आत्मा नहीं माना, बल्कि रस की अभिव्यक्ति में सहायक एक शैलीगत तत्त्व के रूप में प्रस्तुत किया। इसी प्रकार वक्रोक्ति को भी उन्होंने काव्य की विशेषता के रूप में स्वीकार किया, परंतु उसे काव्य की आत्मा नहीं माना। मम्मट का दृष्टिकोण इस बात को दर्शाता है कि वे काव्य को एक समग्र अनुभव मानते हैं, जिसमें विभिन्न तत्त्वों का समन्वय आवश्यक है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि केवल अलंकारों की उपस्थिति से काव्य उत्कृष्ट नहीं होता, जब तक उसमें रस की सृष्टि न हो। मम्मट का *काव्यप्रकाश* ग्रंथ केवल एक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह एक बौद्धिक संवाद है, जिसमें उन्होंने पूर्ववर्ती आचार्यों के मतों की समीक्षा की है, उनके तर्कों को परखा है, और एक संतुलित निष्कर्ष प्रस्तुत किया है। उन्होंने भामह, दण्डी, वामन, उद्भट, रुद्रट आदि के विचारों को समाहित करते हुए एक ऐसी दृष्टि प्रस्तुत की है जो काव्यशास्त्र को एक समग्र और जीवंत परंपरा के रूप में स्थापित करती है। मम्मट का दृष्टिकोण आधुनिक साहित्यिक सिद्धांतों के निकट भी प्रतीत होता है, जहाँ काव्य को केवल सजावट नहीं, बल्कि भावों की अभिव्यक्ति और पाठक के अनुभव का माध्यम माना जाता है।

इस प्रकार मम्मट का काव्यदर्शन संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में एक महत्वपूर्ण मोड़ है, जहाँ अलंकारप्रधान दृष्टिकोण से रसप्रधान समन्वय की ओर संक्रमण होता है। उनका दृष्टिकोण न केवल काव्य की परिभाषा को व्यापक बनाता है, बल्कि काव्य के मूल्यांकन के लिए एक बहुआयामी दृष्टि भी प्रदान करता है। मम्मट की यह समन्वयवादी दृष्टि आज भी साहित्यिक समीक्षा और सौंदर्यशास्त्र के अध्ययन में अत्यंत प्रासंगिक है।

तुलनात्मक विश्लेषण: सिद्धांतों, परिभाषाओं और दृष्टिकोणों की तुलना

संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में भामह और मम्मट दो ऐसे आचार्य हैं, जिनकी दृष्टियाँ काव्य के स्वरूप और सौंदर्यबोध को लेकर भिन्न हैं, किंतु दोनों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। भामह ने जहाँ काव्य की परिभाषा को "शब्दार्थौ सगुणौ काव्यम्" के रूप में प्रस्तुत किया और अलंकार को काव्य का प्राण माना, वहीं मम्मट ने "रसात्मकं काव्यम्" कहकर रस को काव्य

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

की आत्मा घोषित किया। यह अंतर केवल परिभाषाओं का नहीं, बल्कि काव्य के मूल उद्देश्य और सौंदर्य की अवधारणा का भी है। भामह के अनुसार काव्य की शोभा और प्रभावशीलता अलंकारों की उपस्थिति से उत्पन्न होती है, जबकि मम्मट के अनुसार काव्य का मूल प्रयोजन रस की सृष्टि है, और अलंकार, गुण, रीति, वक्रोक्ति आदि तत्त्व उस रस की अभिव्यक्ति में सहायक होते हैं। भामह की दृष्टि अपेक्षाकृत अधिक वस्तुनिष्ठ और रूपात्मक है। वे काव्य को एक कलात्मक रचना मानते हैं, जिसमें अलंकारों के माध्यम से सौंदर्य की सृष्टि होती है। उन्होंने रस की चर्चा तो की है, किंतु उसे गौण स्थान दिया है। इसके विपरीत मम्मट की दृष्टि अधिक समन्वयवादी और भावात्मक है। उन्होंने काव्य के सभी तत्त्वों को एक सूत्र में बाँधते हुए रस को केंद्र में रखा है। मम्मट ने यह स्पष्ट किया कि जब तक काव्य में रस की अनुभूति नहीं होती, तब तक वह केवल शब्दों का विन्यास मात्र है। इस प्रकार जहाँ भामह काव्य की बाह्य शोभा पर बल देते हैं, वहीं मम्मट उसकी आंतरिक अनुभूति को प्राथमिकता देते हैं।

दोनों आचार्यों की दृष्टियों में एक और महत्वपूर्ण अंतर यह है कि भामह ने काव्य की उत्कृष्टता को अलंकारों की संख्या, प्रकार और प्रयोग की कुशलता से जोड़ा है, जबकि मम्मट ने काव्य की गुणवत्ता को गुण-दोष, रीति और रस की अभिव्यक्ति की क्षमता से आँका है। भामह के लिए अलंकारों की उपस्थिति ही काव्य को विशिष्ट बनाती है, जबकि मम्मट के लिए अलंकार तब तक प्रभावी नहीं होते जब तक वे रस की सृष्टि में सहायक न हों। मम्मट ने दोषों की भी विस्तृत चर्चा की है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वे केवल सौंदर्य की सृष्टि नहीं, बल्कि उसकी शुद्धता और प्रभावशीलता पर भी ध्यान देते हैं। भामह और मम्मट के दृष्टिकोणों की तुलना करते समय यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि दोनों आचार्य अपने-अपने युग की साहित्यिक चेतना के प्रतिनिधि हैं। भामह का युग वह था जब काव्यशास्त्र एक उभरती हुई विधा थी और उसमें अलंकारों की पहचान और वर्गीकरण पर विशेष बल दिया जा रहा था। वहीं मम्मट का युग वह था जब काव्यशास्त्र एक परिपक्व शास्त्र बन चुका था और उसमें समन्वय की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। इस दृष्टि से मम्मट का दृष्टिकोण अधिक समग्र और संतुलित प्रतीत होता है, किंतु भामह की भूमिका भी आधारशिला के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

इस तुलनात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में विचारों की विविधता के साथ-साथ एक विकासशील प्रवृत्ति भी विद्यमान रही है। भामह से मम्मट तक की यात्रा केवल दो आचार्यों के मतभेदों की कहानी नहीं है, बल्कि यह उस बौद्धिक विमर्श की झलक है, जिसमें काव्य के स्वरूप, प्रयोजन और सौंदर्य की अवधारणा निरंतर विकसित होती रही। यह विकास न केवल शास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि आधुनिक साहित्यिक विमर्श के लिए भी प्रेरणास्पद है, जहाँ सौंदर्य, अभिव्यक्ति और अनुभूति के बीच संतुलन की खोज आज भी जारी है।

काव्यशास्त्र में रस और अलंकार का अंतर्संबंध

संस्कृत काव्यशास्त्र में रस और अलंकार दो ऐसे तत्त्व हैं जो काव्य की संरचना और प्रभावशीलता को गहराई प्रदान करते हैं। यद्यपि विभिन्न आचार्यों ने इन दोनों की प्राथमिकता को लेकर भिन्न-भिन्न मत प्रस्तुत किए हैं, फिर भी यह निर्विवाद है कि रस और अलंकार एक-दूसरे के पूरक हैं और काव्य की पूर्णता इन्हीं के समन्वय से संभव होती है। भामह ने अलंकार को काव्य का प्राण माना और रस को गौण स्थान दिया, जबकि मम्मट ने रस को काव्य की आत्मा घोषित किया और अलंकारों को सहायक तत्त्व के रूप में स्वीकार किया। इन दोनों दृष्टियों के बीच जो संवाद और अंतर्संबंध है, वह काव्यशास्त्र की सूक्ष्मता और समग्रता को दर्शाता है। रस वह तत्त्व है जो पाठक या श्रोता के हृदय में भावों की अनुभूति कराता है। यह अनुभूति काव्य के शब्दों और अर्थों के माध्यम से उत्पन्न होती है, और उसमें अलंकारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। अलंकार न केवल भाषा को सौंदर्य प्रदान करते हैं, बल्कि वे भावों की अभिव्यक्ति को भी प्रभावशाली बनाते हैं। उदाहरण के लिए, उपमा अलंकार के माध्यम से किसी भाव की तुलना करके उसे अधिक स्पष्ट और सजीव बनाया जा सकता है, जिससे रस की अनुभूति तीव्र होती है। इसी प्रकार रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक, अनुप्रास आदि अलंकारों के प्रयोग से भावों की गहराई और सौंदर्य दोनों में वृद्धि होती है।

भामह की दृष्टि में अलंकारों की संख्या, प्रकार और प्रयोग की कुशलता ही काव्य की उत्कृष्टता का मानदंड है। उन्होंने रस की चर्चा तो की, परंतु उसे काव्य की आत्मा नहीं माना। उनके अनुसार अलंकारों के बिना काव्य निष्प्रभ होता है। दूसरी ओर, मम्मट ने यह स्पष्ट किया कि रस की सृष्टि ही काव्य का मूल उद्देश्य है, और अलंकार तब तक प्रभावी नहीं होते जब तक

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

वे उस रस की अभिव्यक्ति में सहायक न हों। उन्होंने अलंकारों को रस के संप्रेषण का माध्यम माना, न कि स्वतंत्र सौंदर्य का स्रोत। यह दृष्टिकोण अधिक समन्वयवादी है, जिसमें काव्य के सभी तत्त्वों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास किया गया है। रस और अलंकार का यह अंतर्संबंध केवल सिद्धांतों की बात नहीं है, बल्कि यह काव्य की रचना प्रक्रिया में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। एक कवि जब किसी भाव को व्यक्त करना चाहता है, तो वह उस भाव के अनुरूप अलंकारों का चयन करता है। यदि भाव करुण है, तो वह ऐसे अलंकारों का प्रयोग करेगा जो उस करुण रस की अनुभूति को गहराई प्रदान करें। इसी प्रकार श्रृंगार, वीर, हास्य आदि रसों की अभिव्यक्ति में भी अलंकारों की भूमिका निर्णायक होती है। इस प्रकार अलंकार केवल भाषा की सजावट नहीं, बल्कि भावों की संवेदना को सजीव करने का उपकरण हैं। भारतीय काव्यशास्त्र की यह विशेषता रही है कि उसने सौंदर्य को केवल बाह्य रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे भावात्मक और आत्मिक स्तर पर भी समझा। रस और अलंकार का अंतर्संबंध इसी दृष्टि का प्रमाण है। यह संबंध दर्शाता है कि काव्य की उत्कृष्टता केवल शैली या सजावट से नहीं, बल्कि भावों की गहराई और उनकी प्रभावशील अभिव्यक्ति से निर्धारित होती है। आधुनिक साहित्यिक विमर्श में भी यह अंतर्संबंध अत्यंत प्रासंगिक है, जहाँ भाषा की नवीनता और भावों की प्रामाणिकता दोनों को महत्त्व दिया जाता है। यह स्पष्ट होता है कि भामह और मम्मट की दृष्टियों को विरोध के रूप में नहीं, बल्कि एक विकासशील संवाद के रूप में देखा जाना चाहिए। रस और अलंकार का समन्वय ही वह सूत्र है जो काव्य को पूर्णता प्रदान करता है, और यही काव्यशास्त्र की आत्मा है।

काव्यशास्त्र में विचारधारात्मक संक्रमण: भामह से मम्मट तक की बौद्धिक यात्रा

संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में भामह से मम्मट तक की यात्रा केवल सिद्धांतों की तुलना नहीं है, बल्कि यह उस गहन बौद्धिक संक्रमण की कहानी है जिसमें काव्य के स्वरूप, प्रयोजन और सौंदर्यबोध की अवधारणाएँ समय के साथ बदलती और परिपक्व होती गईं। यह संक्रमण न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि भारतीय दार्शनिक और सांस्कृतिक चेतना के विकास को भी प्रतिबिंबित करता है। भामह के युग में काव्य को मुख्यतः अलंकारों की दृष्टि से देखा गया, जहाँ भाषा की सजावट और शैलीगत चमत्कार को काव्य की आत्मा माना गया। उस समय साहित्यिक अभिव्यक्ति को कलात्मक कौशल के रूप में प्रतिष्ठित किया जा रहा

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

था, और काव्य की उत्कृष्टता को अलंकारों की संख्या, प्रकार और प्रयोग की कुशलता से आँका जाता था।

परंतु जैसे-जैसे साहित्यिक विमर्श गहराता गया, वैसे-वैसे यह अनुभव होने लगा कि काव्य केवल सजावट नहीं, बल्कि भावों की अभिव्यक्ति और पाठक के हृदय में रस की अनुभूति कराने का माध्यम है। इस विचारधारा का बीज वैदिक साहित्य और नाट्यशास्त्र में पहले ही पड़ चुका था, जहाँ रस को मानव अनुभव का सार माना गया था। अभिनवगुप्त जैसे दार्शनिकों ने रस को आत्मानुभूति से जोड़कर उसे आध्यात्मिक ऊँचाई प्रदान की। इस पृष्ठभूमि में मम्मट का दृष्टिकोण एक समन्वयवादी और परिपक्व दृष्टि के रूप में सामने आता है, जिसमें उन्होंने काव्य के सभी तत्त्वों – अलंकार, गुण, दोष, रीति, वक्रोक्ति – को स्वीकार करते हुए रस को काव्य की आत्मा घोषित किया। यह विचारधारात्मक संक्रमण केवल सिद्धांतों की पुनर्व्याख्या नहीं था, बल्कि यह उस सांस्कृतिक और दार्शनिक परिवर्तन का संकेत था जिसमें साहित्य को केवल मनोरंजन या सौंदर्य का साधन नहीं, बल्कि मानव भावनाओं की गहन अभिव्यक्ति और आत्मिक अनुभव का माध्यम माना जाने लगा। भामह की दृष्टि में जहाँ कवि की प्रतिभा अलंकारों के प्रयोग में निहित थी, वहीं मम्मट की दृष्टि में वह रस की सृष्टि में केंद्रित हो गई। यह परिवर्तन भारतीय साहित्यिक चेतना की उस यात्रा को दर्शाता है जिसमें भाषा, शैली और भाव के बीच संतुलन स्थापित करने की कोशिश की गई।

इस संक्रमण में मध्यवर्ती आचार्यों की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही, जिन्होंने विभिन्न दृष्टिकोणों को प्रस्तुत कर काव्यशास्त्र को बहस और संवाद का मंच बनाया। दण्डी ने गुणों की भूमिका को रेखांकित किया, वामन ने रीति को आत्मा माना, उद्भट और रुद्रट ने अलंकारों की विविधता को विस्तार दिया – और अंततः मम्मट ने इन सभी को समाहित कर एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। यह समन्वय न केवल काव्यशास्त्र को परिपक्व बनाता है, बल्कि यह दर्शाता है कि भारतीय बौद्धिक परंपरा में विरोध नहीं, संवाद और समन्वय की प्रवृत्ति अधिक प्रबल रही है। आज के साहित्यिक विमर्श में भी यह संक्रमण अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक साहित्य में जहाँ एक ओर भाषा और शैली की नवीनता को महत्त्व दिया जाता है, वहीं दूसरी ओर भावों की गहराई और पाठक की अनुभूति को भी केंद्रीय स्थान प्राप्त है। भामह और मम्मट की दृष्टियाँ इस द्वंद्व को समझने और संतुलित करने में सहायक हो सकती हैं। यह

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

विचारधारात्मक यात्रा हमें यह सिखाती है कि साहित्य का मूल्यांकन केवल बाह्य सौंदर्य से नहीं, बल्कि उसकी आंतरिक संवेदना और प्रभावशीलता से किया जाना चाहिए।

ऐतिहासिक विकास: मध्यवर्ती आचार्यों (दण्डी, वामन, उद्भट, आदि) का संक्षिप्त उल्लेख

भामह और मम्मट के मध्यवर्ती काल में संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा ने एक महत्वपूर्ण विकास यात्रा तय की, जिसमें अनेक आचार्यों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से काव्य के स्वरूप, तत्त्वों और सौंदर्यबोध की व्याख्या की। इन आचार्यों ने न केवल भामह की अलंकारप्रधान परंपरा को आगे बढ़ाया, बल्कि काव्यशास्त्र को नई दिशाएँ भी प्रदान कीं। इस कालखंड में दण्डी, वामन, उद्भट, रुद्रट आदि प्रमुख आचार्य हुए, जिनकी काव्यशास्त्रीय अवधारणाएँ मम्मट के समन्वयवादी दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि निर्मित करती हैं। दण्डी का *काव्यादर्श* ग्रंथ भामह के पश्चात् काव्यशास्त्र की दूसरी महत्वपूर्ण कड़ी है। दण्डी ने काव्य की परिभाषा में शब्द और अर्थ के साथ गुणों की उपस्थिति को आवश्यक माना और अलंकारों को काव्य की शोभा बढ़ाने वाला तत्त्व स्वीकार किया। उन्होंने काव्य में माधुर्य, प्रसाद, ओज आदि गुणों की चर्चा की और काव्य की रचना में रीति की भूमिका को भी रेखांकित किया। दण्डी की दृष्टि में काव्य एक कलात्मक रचना है, जिसमें शब्द और अर्थ की संगति के साथ-साथ शैलीगत सौंदर्य भी अनिवार्य है।

वामन ने *काव्यालंकारसूत्रवृत्ति* में पहली बार रीति को काव्य की आत्मा घोषित किया – "रीतिरात्मा काव्यस्य"। उन्होंने विभिन्न रीतियों का वर्गीकरण किया और यह प्रतिपादित किया कि काव्य की उत्कृष्टता उसकी शैली पर निर्भर करती है। वामन का यह दृष्टिकोण काव्यशास्त्र में एक नई दिशा का संकेत देता है, जहाँ काव्य की आत्मा को अलंकार या रस के स्थान पर रीति में देखा गया। यद्यपि बाद के आचार्यों ने इस मत को व्यापक रूप से स्वीकार नहीं किया, फिर भी वामन का योगदान काव्यशास्त्र के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उद्भट ने *काव्यालंकारसंग्रह* में अलंकारों की संख्या और वर्गीकरण को और अधिक व्यवस्थित किया। उन्होंने विशेष रूप से शब्दालंकारों और अर्थालंकारों की सूक्ष्म व्याख्या की और उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा आदि अलंकारों के प्रयोग की बारीकियों को स्पष्ट किया। उद्भट की दृष्टि में अलंकार केवल सजावट नहीं, बल्कि काव्य की अर्थवत्ता और प्रभावशीलता को बढ़ाने वाला तत्त्व है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि अलंकारों का प्रयोग तभी सार्थक होता है जब वह भावों की अभिव्यक्ति में सहायक हो।

रुद्रट ने *काव्यालंकार* नामक ग्रंथ में अलंकारों की संख्या को और अधिक विस्तृत किया और कुछ नवीन अलंकारों की भी चर्चा की। उन्होंने रस की भूमिका को भी स्वीकार किया, किंतु उसे काव्य की आत्मा के रूप में नहीं, बल्कि एक सहायक तत्त्व के रूप में देखा। रुद्रट की दृष्टि में काव्य की शोभा अलंकारों की विविधता और प्रयोग की कुशलता में निहित है। उन्होंने काव्य की रचना में कवि की प्रतिभा, कल्पना और भाषा-कौशल को भी महत्त्वपूर्ण माना। इन सभी मध्यवर्ती आचार्यों की विचारधारा ने मम्मट के समन्वयवादी दृष्टिकोण की नींव रखी। मम्मट ने इन सभी मतों का गहन अध्ययन कर उन्हें एक सूत्र में बाँधने का प्रयास किया। उन्होंने अलंकार, गुण, दोष, रीति, रस, वक्रोक्ति आदि सभी तत्त्वों को काव्य की रचना में आवश्यक माना, परंतु रस को केंद्र में रखकर एक संतुलित और व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इस प्रकार भामह से मम्मट तक की यात्रा में जो विविध विचारधाराएँ विकसित हुईं, वे न केवल काव्यशास्त्र की समृद्धि का प्रमाण हैं, बल्कि भारतीय बौद्धिक परंपरा की गहराई और बहुलता को भी दर्शाती हैं।

निष्कर्ष

संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में भामह से मम्मट तक की यात्रा केवल दो आचार्यों के विचारों की तुलना नहीं है, बल्कि यह उस गहन बौद्धिक और सौंदर्यात्मक विमर्श की झलक है, जिसमें काव्य के स्वरूप, तत्त्वों और प्रभाव की अवधारणाएँ निरंतर विकसित होती रही हैं। भामह ने जहाँ काव्य को अलंकारप्रधान दृष्टि से देखा और उसे शब्द और अर्थ की गुणयुक्त संगति के रूप में परिभाषित किया, वहीं मम्मट ने रस को काव्य की आत्मा मानते हुए एक समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इन दोनों के बीच के मध्यवर्ती आचार्यों – जैसे दण्डी, वामन, उद्भट, रुद्रट आदि – ने काव्यशास्त्र को विविध दिशाओं में विस्तार दिया, जिससे यह शास्त्र एक परिपक्व और बहुआयामी प्रणाली के रूप में विकसित हुआ। इस विकास यात्रा में यह स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक काल में काव्य की शोभा और कलात्मकता को अलंकारों के माध्यम से समझा गया, परंतु जैसे-जैसे साहित्यिक चेतना परिपक्व होती गई, वैसे-वैसे भावों की अभिव्यक्ति, रस की अनुभूति, गुण-दोष की पहचान और शैलीगत विविधता को भी महत्त्व

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

मिलने लगा। मम्मट का *काव्यप्रकाश* इस समन्वय का प्रतीक है, जिसमें उन्होंने पूर्ववर्ती मतों को समाहित करते हुए एक संतुलित और व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि काव्य की उत्कृष्टता केवल अलंकारों की उपस्थिति से नहीं, बल्कि रस की सृष्टि से निर्धारित होती है, और अन्य तत्त्व उस रस की अभिव्यक्ति में सहायक होते हैं।

आधुनिक साहित्यिक विमर्श में भी यह बहस आज तक जीवित है कि साहित्य का मूल्यांकन किन आधारों पर किया जाए – क्या वह केवल शैली और सजावट पर आधारित हो, या भावों की गहराई और पाठक की अनुभूति पर। इस संदर्भ में भामह और मम्मट की दृष्टियाँ आज भी प्रासंगिक हैं। भामह की अलंकारप्रधान दृष्टि हमें यह सिखाती है कि भाषा और शैली का सौंदर्य साहित्य में कितना महत्त्वपूर्ण है, जबकि मम्मट की रसप्रधान दृष्टि यह दर्शाती है कि साहित्य का अंतिम उद्देश्य पाठक के हृदय में भावों की सृष्टि करना है। इन दोनों दृष्टियों का समन्वय ही एक संतुलित साहित्यिक मूल्यांकन की ओर संकेत करता है। इस शोध के माध्यम से यह निष्कर्ष निकलता है कि संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा में विचारों की विविधता के साथ-साथ एक विकासशील प्रवृत्ति भी रही है, जिसने काव्य को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि भावात्मक संप्रेषण का माध्यम माना। भामह से मम्मट तक की यह यात्रा भारतीय साहित्यिक चिंतन की गहराई, सूक्ष्मता और समन्वयशीलता का प्रमाण है। यह परंपरा आज के साहित्यिक अध्ययन में भी मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है, जहाँ सौंदर्य, अभिव्यक्ति और अनुभूति के बीच संतुलन की खोज निरंतर जारी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भामह - काव्यालंकार: अलंकारों को काव्य का प्राण मानने वाला प्रारंभिक ग्रंथ।
2. मम्मट - काव्यप्रकाश: रस को काव्य की आत्मा मानते हुए समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।
3. दण्डी - काव्यादर्श: गुणों और रीतियों के माध्यम से काव्य की शोभा पर बल देता है।
4. वामन - काव्यालंकारसूत्रवृत्ति: रीति को काव्य की आत्मा घोषित करने वाला सूत्रात्मक ग्रंथ।
5. उद्भट - काव्यालंकारसंग्रह: अलंकारों के वर्गीकरण और प्रयोग की सूक्ष्म व्याख्या करता है।

Kavya Setu
A Multidisciplinary Open Access, Peer Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 ISSN No: 3049 4176

6. रुद्रट - काव्यालंकार: अलंकारों की संख्या और नवीन प्रयोगों पर विस्तृत दृष्टि।
7. आनन्दवर्धन - ध्वन्यालोक: ध्वनि सिद्धांत के माध्यम से रस की गूढ़ता को उद्घाटित करता है।
8. अभिनवगुप्त - अभिनवभारती: नाट्यशास्त्र पर टीका के रूप में रस सिद्धांत की दार्शनिक व्याख्या।
9. पाण्डुरंग वामन काणे - संस्कृत साहित्य का इतिहास: काव्यशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित ग्रंथ।
10. राजा - संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास: काव्यशास्त्र के विकासक्रम का समग्र विश्लेषण।
11. हजारीप्रसाद द्विवेदी - साहित्य की भूमिका: आधुनिक दृष्टिकोण से साहित्य और सौंदर्यबोध की चर्चा।
12. विनायक कृष्ण गोकाक - भारतीय साहित्य के मूल तत्त्व: भारतीय साहित्यिक परंपरा की समन्वयवादी दृष्टि।